षटकार– स्वास्थ्यवर्द्धक औषधालय वाराणसी

"सिन्धु घाटी की सभ्यता"

(1) 1856 में लाहौर से कराची तक रेलवे लार्डन बिछाने की जरूरत पड़ी थी।

(2) स्थान	उत्खनन वर्ष	उत्खनन वर्ष
हड़प्पा (पंजाब)	1921	माघोस्वरूप वत्स
मोहन जोदड़ो (सिन्ध)	1922	आर0 डी0 बनर्जी
चहुन्दड़ो	1925	अर्नेस्ट मैके आदि।

अन्तर

सिन्धु सभ्यता	**–**	**वैदिक सभ्यता**
नगरीय एवं व्यापार प्रधान	–	ग्राम्य एवं कृषि प्रधान
मूर्तिपूजक	–	नहीं
लिंगपूजक	–	नहीं
शिव व मातृ देवी पूजा	–	नहीं
अग्नि का महत्व नहीं था	–	अग्नि का महत्व था।
नहीं	–	ढ़ाल कवच शिरस्त्राण का प्रचलन
नहीं	–	घोड़ो का विशेष महत्व
पाषाण का प्रयोग मात्र तांबा	–	सोने चांदी, तांबे, कांसे आदि का प्रयोग
सोने, चांदी का प्रयोग थोड़ा	–	
हाथी तथा व्याघ्र से परिचित थें	–	मात्र हाथी से
बैल, सांड	–	गाय
मछली प्रिय भोजन थी	–	मछली का प्रयोग नहीं जबकि मांसाहारी थें

जाति–

1. सिन्धु सभ्यता और वैदिक सभ्यता दोनों के जन्मदाता आर्य थे और वैदिक सभ्यता, सिन्धु सभ्यता से प्राचीन थी।
2. सिन्धु निवासी, सुमेरियन थे– डा0 गार्डन चाईल्ड।

अस्थि पंजरो के आधार पर – चार भाग

1. प्रोटो आस्ट्रेलार्डड अथवा काकेशियन– इनकी उत्पत्ति फिलीस्तीन में हुई थी, सिन्धु घाटी सभ्यता की यह सबसे हीन जाति थी। अरब में आज भी पायी जाती है।
2. भूमध्य सागरीय– संख्या में सबसे अधिक थी एवं सबसे अधिक सम्मान्य एवं अभिजात थी। सिन्धु सभ्यता के विकास में सबसे अधिक योगदान आज सम्पूण एशिया में पायी जाती हैं इनका सिर बड़ा होता है।
3. मंगोलियन– यह सिन्धु घाटी की मूल जाति नहीं बल्कि आक्रमणकारी थी जो इरान के पठार से आयी थी।
4. अल्पाईन– यह पामीर के पठार से आयी थी। सिन्धु सभ्यता के विकास में इसका भी योगदान अच्छा था।

विशेषतायेे–

1. यह सभ्यता शांति मूलक एवं समाष्टिवादिनी थी क्योंकि यहाँ के उत्खनन में राज सामाग्री के स्थान पर सार्वजनिक सामग्री ही मिलती है।
2. सिन्धु सभ्यता में– लेख, गवना, माय आदि की स्थापना हो चुकी थी।

शासन पद्धति

(1) सम्पूर्ण सिन्धु प्रदेश में शासन को सुव्यवस्थित रखने के लिए दो शासन केन्द्रो अथवा राजधर्मीयों की स्थापना की गई थी।

1. उत्तर में हड़प्पा 2. दक्षिण में मोहन जोदड़ो

(2) हंटर का मत है कि– मोहन जोदड़ो का शासन, राजतंत्रात्मक न होकर जनतंत्रात्मक था। प्रतिनिधि शासन।
(3) पिगट के अनुसार– शासन पर पुरोहित वर्ग का प्रभाव था।

निष्कर्ष–

1. केन्द्रीय शासन का विकेन्द्रीकरण कर दिया गया था। अतः केन्द्रीय शासन की ओर से अनेक पदाधिकारी भिन्न–भिन्न नगरों में शासन करते थें।
2. प्रत्येक नगर में नगर पालिका की व्यवसथा थी, रक्षकों की भी व्यवस्था थी।

नगर योजना एवं भवन निर्माण

1. सड़के एक दूसरे को समकोड़ पर काटती थी। इस प्रकार नगर कई जंड़ो में विभाजित हो जाता था, वो खंड मौहल्ले के रूप में हो जाते थे।
2. प्रत्येक नगर में सड़को तथा गलियों के दोनो ओर नालियां होती थी। जो बड़ी नालियों में मिलती थी।
3. हड़प्पा की अपेक्षा मोहन जोदड़ो के भवन काफी विशाल थे। मोहनजोदड़ो के ध्वंशावंशषों को विद्वानों ने तीन भागों में बांटा है।

   1. प्राचीन 2. मध्य 3. नवीनतम

   पहला और दूसरा काल, सवेश्रेष्ठ था, तीसरा अवनति का सूचक हैं
4. इंटो पर किसी प्रकार का लेख या चित्र नहीं मिलता। पक्की इंटो की निम्न माप मिलती है।
5. मकान– नींव डालकर, उंचे चबूतरों पर कच्ची तथा पक्की इंटों से दो मंजिला बनाये जाते थे।
6. दीवारों पर पलास्तर मिट्टी तथा जिप्सम से होता था। प्रत्तेक गृह में आंगन, पाठशाला, स्नानागार, शौचगृह तथा कुएं होते थे। कुएं अंडाकार होते थे। प्रवेश के लिए सीढ़िया बनी होती थी।
7. मकान के दरवाजे मुख्य सड़को की तरफ न होकर गलियों की तरफ होते थे। भवनों के द्वारों पर मेहराब का प्रयोग होता था।

कला

1. मुद्रार्थ ताबीज, खिलौने, गुड़िया, आभूषण तथा बर्तन आदि मिले हैं। ये धातु को गलाना जानते थे।
2. सैंधव कलाकारों ने कल्पना और आदर्श की ओर इतना ध्यान नहीं दिया जितना कि उपयोगिता और वास्तविकता की ओर अतः उन्हीं वस्तुओं का निर्माण किया गया जो सर्वसाधारण के लिये उपयोगी थी।
3. चाक नहीं मिला है परन्तु बर्तन तथा खिलौने चाक व हाथ दोनों से बनाये जाते थे।
4. मोहन जोदड़ो से 6 और हड़प्पा से 14 कुम्भकारों के भट्टे मिले हैं।
5. बर्तनों की पेंदी गोल होती थी तथा उसमें मुढ़ियां या टोंटी भी नहीं होती थी।
6. मोहन जोदड़ो से प्राप्त बर्तनों पर न तो लेख ही मिलते हैं न मानवाकृतियां जबकि हड़प्पा से प्राप्त बर्तनों पर दोनों मिलती हैं।
7. बर्तनों का अलंकरण, पशुपक्षी, फूल वृक्ष आदि से लिया जाता था।

8. पशुओं की मूर्तियों में सबसे ज्यादा बैल की मूर्ति मिली है।
9. बत्तख पक्षी की मूर्ति अध्याधिक पवित्र मानी जाती थी।
10. पशुओं में गैंड़े, हाथी, भेड़, बकरी, बंदर, सुअर आदि की मूर्तियां मिली हैं।
11. सुअर, कबूतर, गिलहरी, हंस, ऊंट, कुत्ता, बाघ, घड़ियाल नाग आदि की मूर्ति।
12. सांचा नहीं मिला है। सामान्यतः मुर्तियों के अलग–अलग हिस्सों को बनाकर मसाले से जोड़ा जाता था।
13. हड़प्पा से दो पाषाण निर्मित मूर्तियां मिली हैं–
    क. लाल पत्थर की बनी मानव मुर्ति– इसका सिर टूटा हैं
    ख. काले पत्थर की एक नर्तकी की मूर्ति–

1. मोहन जोदड़ो से एक मूर्ति मिली है जिसका केवल अधोभाग ही प्राप्त है। इसे योगी की मूर्ति कहा जाता है।
2. लिंग एवं योनि बहुसंख्यक– शैवश्ज0 का प्रतीक
3. सैंधव कलाकार, पाषाण को काटने तराशने तथा उन्हें जोड़ने की कला से परिचित थे।
4. धातुओं के गलाने, ढालने, पीटने तथा समिक्षण करने में दक्ष थे।
5. मोहन जोदड़ो से एक तांबे की बनी कूबड़दार बैल का खिलौना।
6. कुछ पीतल की मूर्तियां भी मिली हैं।
7. सोने की अपेक्षा चांदी अधिक प्रयोग की जाती थी।

धर्म

1. परम पुरूष की उपासना – शिव की मूर्ति के रूप में।
2. धर्मुधारी शिकारी समीकरण – किरात भेषधारी शिव से
3. परमानारी की उपासना – की मूर्ति मो0, ह0, च0 से से मिली है। नारी नग्न रूप में प्रदर्शित की गई है। मातृदेवी से स्तनपान कराती हुई मुद्रा में।
4. लिंग पूजा – दो प्रकार (क) फैलिक (ख) वीटल्स
   लिंग को पास रखना कल्याण कारी माना जाता था।
5. पीपल के वृक्ष को सबसे पवित्र माना जाता था।
6. मोहन जोदड़ो का स्नानागार के आधार पर पवित्रस्नान एवं जलपूजा की कल्पना।
7. स्वास्तिका चक्र, क्रास आदि मिले हैं।
8. मंदिर का उल्लेख नहीं मिलता। उपासिकायें तथा देव दासियों का वर्णन मिलता है।
9. पूजा के पहले शारीरिक शुद्धि आवश्यक मानी जाती थी। धुप,दीप का प्रयोग होता था।

मराठा पेशवाओं का उत्थान

18वीं शताब्दी के आरम्भ में मराठें, औरंगजेब के विरूद्ध संघर्ष में उलझे रहे किन्तु 1707 में औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात मराठों में यह एकता बहुत कम हो गयी। 1707 में साहु के रिहा होने के बाद मराठा गद्दी प्राप्त करने के लिए साहू तथा ताराबाई में गृहयुद्ध शुरू हो गया। मराठा सरदार अपने–अपने स्वार्थो में उलझे हुए थे। साथ ही हैदराबाद का निजाम मराठा शक्ति को नष्ट करने पर तुला हुआ था। ये परिस्थितियाँ पेशवाओं के उत्थान में सहायक सिद्ध हुई।

इस गृह युद्ध में साहू को सफलता दिलाने में एक राजस्व अधिकारी बालाजी विश्वनाथ का बहुत बड़ा योगदान था जिसके परितोषिक में साहू ने विश्वनाथ को अपना पेशवा नियुक्त किया। विश्वनाथ ने बौध तथा सरदेश मुखी के माध्यम से तो मराठा प्रभाव क्षेत्र को तो विस्तृत किया लेकिन उन क्षेत्रों में शांति व्यवस्था तथा प्रशासनिक कुशलता की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। बालाजी की सबसे बड़ी उपलब्धि मराठा राज्य संघ का गठन करना था।

विश्वनाथ की मृत्यु के बाद 1720 में उसके पुत्र बाजीराम प्रथम (1720–40) को साहू अपना पेशवा नियुक्त किया। बाजीराव ने भी चौथ तथा सरदेश मुखी के माध्यम मराठा प्रभाव क्षेत्र को विस्तृत करके विभिन्न मराठा सरदारों में बांट दिया ताकि मराठा सरदार उसके अधीन रहे।

बाजीराव की उत्तरी भारत पर मराठा प्रभुत्व की नीति का वास्तविक लक्ष्य मराठा साम्राज्य विस्तार और आर्थिक स्थिति को दृढ़ करने की अपेक्षा मराठा राज्य संघ के विभिन्न सदस्यों को अपने पुरूषार्थ और सैनिक कौशल से प्रभावित करके अपने अधीन रखना था।

साहू की अयोग्यता और मराठा सरदारों की स्वार्थपरता को देखते हुए बाजीराव अपना व्यक्तिगत अधिपत्य मराठा राज्य संघ को सुरक्षित रखने के लिए आवश्यक समझता था। परिणाम स्वरूप राजा अथवा छत्रपति की प्रतिष्ठा कम होती गई।

पानीपत में मराठों की हार के कारण– 14 फरवरी 1761

1. अहमद शाह अब्दाली अपने समय का अत्यंत कुशल सेनानायक था। जबकि सदाशिवराव साहू एक योग्य सैनिक अवश्य था लेकिन अब्दाली जैसा कुशल सेनानायक नहीं था।
2. मराठा सैनिकों का मनोबल युद्ध की पूर्व वेला में घिरा हुआ था, क्योंकि 1759 में विभिन्न अवसरों पर मराठा सेनायें अफगानों के समक्ष पराजित हो चुकी थी।
3. मराठा सेना, शस्त्रों और संगठन की दृष्टि से अफगान सेना की अपेक्षा काफी निम्न स्तर की थी।

   अब्दाली का तोपखाना न मात्र मराठों से ही बल्कि उस ससय एशिया में सबसे उत्तम था। मराठा सेना में विदेशियों का भी काफी योगदान रहता था। जो आवश्यकता के समय प्रायः धोखा दे देते थे।
4. जनवरी 1961 से ही मराठा सेना के लिए खाद्य सामग्री तथा जल आदि का अभाव हो गया था। फलस्वरूप सेना को भूखे रहकर युद्ध करना पड़ता था।
5. साहू ने कई सामरिक गलतियां भी की थी। उसने पानीपत में अपना पड़ाव डालने के पश्चात अपने आवागमन की सुरक्षा पर कोई ध्यान नहीं दिया था। उसने अब्दाली की सैन्यशक्ति को अपेक्षाकृत कम करके आंका।
6. कूटनीतिक भूल– मराठों की असफलता का मुख्य कारण उनकी कूटनीतिक भूल थी–

- 1752 ई0 के बाद मराठों द्वारा मुगल साम्राज्य को आंतरिक तथा बाह्य शत्रुओं से बचने का उत्तर दायित्व लिया जाना एक गम्भीर भूल थी। जिसका परिणाम पानीपत का तृतीय युद्ध हुआ।
- इस उत्तरदायित्व को पूरा करने में मराठों ने समस्त भारतीय नरेशों तथा कुछ मुगल सामंतो को अपना शत्रु बना लिया। मुगल सामंतो में अवध का शुजाउद्दौला तथा नजीबुद्दौला ने अब्दाली का सर्मथन किया। इस तरह मराठों ने बारी–बारी राजपूतों, जाटो, रूहेलो, सिखों, पठानों को अपना शत्रु बना लिया।

  परिणामतः युद्ध में किसी भी भारतीय नरेश ने मराठों का साथ नहीं दिया।
- मराठों ने अपनी सुरक्षा रेखा इतनी लम्बी कर रखी थी कि उसका पूनः से नियंत्रण सरल नहीं था। इससे उनका उत्तरदायित्व तो बढ़ गया लेकिन साधन तथा व्यवस्था उसके अनुरूप बढ़ नहीं सकी।

वास्कोडिगामा (1498– कालीकर) किस देश का निवासी था– पुर्तगाल

पानीपत की हार का परिणाम

1. इस पराज्य ने मुगल साम्राज्य के इतिहास को सदैव के लिए समाप्त कर दिया।
2. मराठों की सम्पूर्ण भारत में हिन्दू राज्य स्थापित करने की कामना पर पानी फिर गया।
3. धन–जन की काफी हानी हुई– लगभग एक लाख मराठें मारे गये, महाराष्ट्र का ऐसा कोई भी परिवार नहीं था जिसने अपने अमूल्य लाल की आहुति इस युद्ध में न दी हों।
4. पेशवा वाला जीवा जीराव पर इस पराज्य का इतना धक्का लगा कि 5 माह बाद ही उसकी मृत्यु हो गयी।
5. दक्षिण में मराठा शक्ति को इतना धक्का लगा कि निजाम तथा हैदर अली को अपना प्रभाव व शक्ति बढ़ाने का अवसर मिला।
6. इस पराज्य का सबसे भयानक परिणाम – अंग्रेजों को भारत पर अपने प्रभाव बढ़ाने का उचित अवसर मिल गया।
7. जिस मराठा संघ की स्थापना बाला जी विश्वनाथ ने किया था। वह छिन्न भिन्न हो गया और उसके स्थान पर सिंधिया होकर भोंसला तथा गायकठ पड़ अपने स्वतंत्र राज्य स्थापित करने में लग गये।

शिवाजी का मूल्यांकन

1. महान साम्राज्य निर्माता।
2. महान शासक प्रबंधक।
3. योग्य सेनापति।
4. अदम्ब उत्साही व साहसी– शाईस्ता खां, अजमत खां, सूरतमीर
5. हिन्दू राज्य की स्थापना– उस समय जब औरंगजेब की नितियां
6. सम्पूर्ण बिखरी मराठा जाति को एक सूत्र में बांधना व उनमें साहस और उत्साह पैदा किया।
7. धर्म सहिष्णु–

(1) मुगलों की विदेशनीति एवं सम्बंध–

पन्द्रहवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में तैमूरी साम्राज्य के विघटन के बाद मध्य एशिया में तीन शक्तिशाली, साम्राज्यों, उजवेक– सफावीद आटोमन का उदय हुआ। उजवेक प्रारम्भ से ही मुगलो के शत्रु थे। उजवेक सुन्नी थे, अतः धार्मिक कट्टरता के कारण इरान के सफावियों से उनका प्रबल मतभेद था, क्योंकि सफावी शिया समर्थक थे और सुन्नियों पर नाना प्रकार के अत्याचार करते थे। दूसरे इरान में शिया शक्ति के उदय से आटोमन सुल्तानों को अपनी पश्चिमी सीमा पर खतरे का आभास होने लगा था। इस प्रकार इरान के सफावी शासकों को दोनों साम्राज्यों उजवेको तथा आटोमन से भय उत्पन्न हो गया और वे मध्यएशिया की राजनीति में अलग–अलग पड़ गये। फलस्वरूप सफावियों ने मुगलों की मेत्री हासिल करने का प्रयास किया। ईधर मुगल भी ईरानियों से अपने मधुर सम्बंध स्थापित करने के लिए लालायित थे कारण यह था कि उन्हें हमेशा उजवेगों से भय रहता था, दूसरे ईरान की मैत्री से मध्य एशिया से उनके व्यापार की सम्भावनायें बढ़ सकती थी। मुगल तुर्को के साथ मैत्री बढ़ाने में इसलिए हिचकिचा रहे थे कि वे तुर्की सुल्तानों को खलीफा के उत्तराधिकारियों के रूप में मान्यता देने को तैयार नहीं थे। इन्हीं तत्वों पर मुगलो की विदेशनीति आधारित थी।

यद्यपि बाबर को उजवेकों द्वारा ईरानियों की पराजय के बाद समरकेद को छोड़ना पड़ा था। फिर भी इरानी बादशाह ने बाबर की जो मद्द की उससे मुगलों तथा सफावी शासकों के मध्य एक दीर्घ जीवी मैत्री की नींव पड़ी। बाद में शेरशाह सूरी द्वारा निकाले जाने के बाद हुमायूं को सफावी सम्राट शाह तहमास्प ने ही शरण दिया था और हुमायूं को हर सम्भव सहायता प्रदान किया था।

अकबर

उजवेक सरदार अब्दुल्ला खां ने 1570 तथा 1579 के मध्य साम्राज्य का बहुत विस्तार कर लिया था। शाह तहमास्प की मृत्यु के बाद इरान में अशांति तथा अराजकता फैल गयी थी। अतः अब्दुल्ला खां ने अकबर को अपना राजदूत भेजकर ईरान को परस्पर बांट लेने का प्रस्ताव किया तथा इराक व खुराशान को शियाओं के चंगुल से मुक्त करने का भी प्रस्ताव किया।

अकबर को अब्दुल्ला खां का यह प्रस्ताव निहायत बुरा लगा। दूसरे उजवेकों को शांति बनाये रखने के लिए एक सशक्त ईरान की आवश्यकता थी, क्योंकि उजवेक मुगलों के लिए भी खतरा उत्पन्न कर सकते थे। लेकिन अकबर साथ ही साथ

उजवेकों से उस समय तक नहीं उलझना चाहता था जब तक कि वे भारतीय क्षेत्रों के लिए खतरा न उत्पन्न करते। अकबर ने अब्दुल्ला खां को अपना एक राजदूत भेजकर यह स्पष्ट कर दिया कि वह उसके प्रस्ताव को अस्वीकार करता है।

इसी बीच अपने सौतेले भाई मिर्जा हकीम की मृत्यु (1585) का लाभ उठाकर अकबर ने काबुल को अपने साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया। इससे मुगल तथा उजवेग सीमायें पास–पास हो गयी। इसी बीच आटोमन सुल्तान ने स्थिति का लाभ उठाते हुए उत्तरी इरान पर धावा बोल दिया। अकबर ने इस कार्यवाई की जमकर आलोचना किया तथा अपने राजकूमार के नेतृत्व में एक सेना इरान की मद्द में भेज ने का प्रस्ताव अब्दुल्ला खां से किया। लेकिन अकबर ने इस अभियान के लिए कोई खास तैयारी नहीं किया। अवसर का लाभ उठाते हुए अब्दुल्ला खां ने खुरासान पर चढ़ाई कर दी और उन अधिकतर क्षेत्रों पर कब्जा कर लिया जिन पर वह पहले से ही दावा कर रहा था।

वस्तु स्थिति का पारखी अकबर ने अब अब्दुल्ला खां से संधि करने में ही अपनी भलाई समझी। अंतः इन दोनों में हिन्दु कुश की सीमा निर्धारित करने से सम्बंधित एक संधि हुई। इस संधि के तहत मुगलों ने 1585 तक तैमूरी शासकों द्वारा शासित प्रदेश बदखसां तथा वल्ख में अपना हस्तक्षेप समाप्त कर दिया। बदले में उजवेकों ने काबुल तथा कंधार पर अपना दावा त्याग दिया। इस संधि के कारण मुगलों को हिन्दुकुशा में एक सुरक्षित सीमा मिल गई। जिसका लाभ उठाकर 1595 में कंधार जीत कर अकबर ने अपने साम्राजय में शामिल कर लिया। वस्तु स्थिति की देखरेख के लिए अकबर स्वंय 1598 तक लाहौर में निवास किया। 1598 में अब्दुल्ला की मृत्यु के बाद उजवेक साम्राजय ऐसे छोटे–छोटे राज्यों में बंट गया जो आपस में बराबर लड़ते रहते थे। इस के परिणाम स्वरूप अकबर पुनः लाहौर से आगरा आया। इस प्रकार कई वर्षो तक मुगलों पर उजवेगों का खतरा समाप्त हो गया।

कंधार का मलाला तथा ईरान के साथ सम्बंध – जहांगीर

उजवेकों के भय से सफावी सासकों की असहिष्णुता की नीति के प्रति मुगलों की अप्रसन्नता के बावजूद भी सफावी तथा मुगल दीर्ध काल से एक दूसरे की मैत्री हासिल करने में सफल रहे थे। दोनों की बीच सम्बंधों में कटुता आने की सम्भावना मात्र कंधार को लेकर थी, जो सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होने के बावजूद आर्थिक तथा व्यापारिक दृष्टि से भी कम महत्वपूर्ण नहीं था। यह दोनों के लिए प्रतिष्ठा का विषय भी बना हुआ था। कंधार अबतक तैमूरी साम्राज्य का अंग रहा था, जिस पर

बाबर के वंशजों को शासन रहा था लेकिन उजवेकों ने उन्हें पराजित कर वहाँ से भगा दिया था। 1507 में बाबर का अधिपत्य भी कंधार पर कुछ समय के लिए था। इसके बाद कंधार अगले 15 वर्षो तक ऐसे शासकों के अधीन रहा, जो अवसरवादी थे। मौका पड़ने पर कभी मुगलों की तो कभी सफावियों की अधीनता स्वीकार कर लेते थे।

1522 में कंधार बाबर के नियंत्रण में उस समय आया जब उजवेक सरदार एक बार फिर खुरासान पर धावे की तैयारी कर रहे थे। इस स्थिति में कंधार पर मुगलों के कब्जे पर इरानियों ने कोई आपत्ति नहीं किया। लेकिन सूरी द्वारा खदेड़े गये हुमायूं को इरानी सम्राट शाह तहमास्प ने इस शर्त पर सहायता देना स्वीकार किया कि हुमायूं कंधार को अपने सौतेले भाई कामरान से प्राप्त कर इरानियों को सौंप देगा। बाद में हुमायूं की मृत्यु के उपरान्त फैली अव्यवस्था का लाभ उठाकर तहमास्प ने कंधार को अधिकृत कर लिया। पुनः 1595 में जब उजवेकों ने खुरासान पर अधिपतय जमा लिया तो कंधार इरान से कट गया। अंततः अकबर ने कंधार को अधिकृत कर लिया।

शाह अब्बास प्रथम सबसे महान तथा प्रतापी सफावी सम्राट हुआ, जो जहांगीर से अपने मधुर सम्बंध स्थापित करने का उत्सुक था। उसने कंधार पर चढ़ाई की योजना को त्याग दिया तथा राजदूतों के व कीमतों का आदान प्रदान शुरू किया। इसका सबसे ज्वलंत उदाहरण जहांगीर के एक दरबारी चित्रकार का वह चित्र है जिसमें जहांगीर तथा शाह अब्बास प्रथम एक दूसरे को गले लगा रहे हैं और उनके पैरो ने नीचे संसार का एक ग्लोब है।

इस काल में दोनों देश सांस्कृतिक दृष्टिकोण से भी एक दूसरे की करीब आय। अनेकानेक इरानी विद्वानों तथा दार्शनिकों को मुगलों ने शरण प्रदान किया। नूर जहाँ का पिता एक मात्र दौला इसका ज्वलंत उदाहरण है।

इतने मधुर सम्बंधो के बावजूद भी 1620 में शाह अब्बास ने एकाएक जहांगीर से कंधार वापस करने का अनुरोध किया साथ ही साथ उस पर चढ़ाई करने की भी योजना बनाई। इस अचानक चढ़ाई का कारण शायद यही हो सकता था कि उस समय जहांगीर सफावियों से दृढ़ मैत्री सम्बंध होने के कारण उनके प्रति निश्चित हो गया हो और वह उजवेक सरदारों की मैत्री पर अधिक जोर न दिया हो फलस्वरूप वह राजनीतिक दृष्टि से अकेला पड़ गया हो। दूसरे आंतरिक विद्रोह वह जहांगीर का उत्तरोत्तर गिरता स्वास्थ भी इस का कारण हो सकता है। फिर भी जहांगीर जल्दी–जल्दी सैनिक तैयारियां करके एक विशाल सेना खुर्रम (शाहजहाँ) के नेतृत्व में भेजने का निश्चय किया। लेकिन दुर्भाग्य वश उसी समय खुर्रम विद्रोह पर आमादा हो

गया और कंधार अभियान पर जाने से इंकार कर दिया। अंततः 1622 कंधार मुगल साम्राज्य से निकल गया। समय से मुगलों तथा इरानियों के सम्बंध कटु हो गये यद्यपि उपरी तथा औपचारिक तौर पर सम्बंध मधुर ही बने रहे।

इरानियों की कंधार विजय से उजवेक घबरा गये, उधर इरान ने तुर्को से बगदाद भी जीत लिया। जिससे एक बार फिर उजवेक तुर्क तथा मुगल जो सभी सुन्नी थे। इरान के विरूद्ध त्रिपक्षीय गुट कायम करने की सोचने लगे।

इसके बावजूद भी निर्बल उजवेक शाह अब्बास को डर के कारण बराबर मुगलो के षडयंत्रों की सूचना उसको देते रहते थे जिससे मुगलों का उजवेगो पर से विश्वास उठ गया। उधर तुर्क भी काफी दूर थे। जिससे मुगलों को कोई सहायता नहीं मिल सकती थी। इस स्थिति में शाहजहाँ ने राजनीति तथा कूटनीति का सहारा लिया। शाह अब्बास की मृत्यु के बाद उत्पन्न अराजकता का लाभ उठाकर शाहजहाँ ने इरान के प्रशासक अली मदनिखां को अपने पक्ष मे करने सफल हो गया।

शाहजहाँ का बल्ख अभियान–

शाहजहाँ कंधार विजय को अपनी मंजिल नहीं बल्कि मार्ग बनाया। वह काबुल पर उजवेकों तथा अफगानों के हमले से निरंतर दूखी रहता था।

इस समय बुखारा तथा बल्ख ईमामकुली के छोठे भाई नजर मोहम्मद के अधीन था। काबुल तथा गजनी पर अपना प्रभाव कायम करने के लिए वह अफगान कवाईलियों से मिलकर षडयंत्र रचा लेकिन शीघ्र ही उसका लड़का अबुल अजीज ने विद्रोह कर दिया। जिससे नजर मुहम्मद के अधीन केवल वल्ख रह गया और शाहजहाँ ने 1646 के मध्य मुराद के नेतृत्व में एक विशाल सेना नजर मु0 की सहायता के लिए भेजा।

मुराद अचानक बल्ख पर चढ़ाई कर बैठा नजर मु0 उस समय उसी किले में था। मुराद उसे अपने सामने उपस्थित होने को कहा लेकिन नजर मु0 मुराद के इरादो से अपरिचित होने के कारण भाग खड़ा हुआ। मुगलों को बाध्य होकर बल्ख पर कब्जा करना पड़ा और वहां की क्षुब्ध और क्रोधित जनता पर नियंत्रण करना पड़ा।

इसके बाद मुराद के स्थान पर औरगंजेब को भेजा गया। नजर मुहम्मद जो अब ईरान में शरण लिये था, अपने साम्राज्य की वापसी के लिये शाहजहाँ से अनुरोध किया। शाहजहाँ ने काफी सोचविचार के बाद इस शर्त पर ऐसा करने के लिए तैयार हुआ कि नजर मुहम्मद औरंगजेब से मांफी मांगे, जो नजर मुहम्मद के लिए एक असम्भव बात थी। दूसरे नजर मुहम्मद यह भी जानता था कि बल्ख पर मुगलों का अधिपत्य काफी रोज तक नहीं बना रह सकता है।

इसी बीच सर्दी का मौसम आ गया और बल्ख में रसद की कमी होने लगी। अतः मुगलों ने 1647 के मध्य में वापस लौटना शुरू कर दिया। लेकिन वापसी बहुत मंहगी पड़ी चारो तरफ से उजवेकों ने छापामार हमले शुरू कर दिये। जिसके मुगलों को जान तथा माल की काफी क्षति उठानी पड़ी।

शाहजहाँ के इस अभियान का उद्देश्य न तो आम्सस नदी पर वैधानिक सीमा स्थापित करने का प्रयास था और न ही मुगलों के स्वदेश समरकेद तथा फरगाना पर कब्जा करने का था। ऐसा लगता है कि शाहजहाँ का लक्ष्य काबुल के सीमावर्ती क्षेत्रों, बल्ख तथा वदखशो में किसी मित्र शासक को बैठाना था। जहाँ बराबर उजवेक तथा बलूची व अफगान सरदार षडयंत्र तथा उपद्रव किया करते थे। जिससे गजनी तथा काबुल के लिए भय उत्पन्न हो गया था।

सामरिक दृष्टि से मुगलों का यह अभियान सफल रहा। इस क्षेत्र में किसी भी भारतीय सेना की यह पहली विजय थी। कुल मिलाकर इस अभियान से केवल मुगल सेना की प्रतिष्ठा व सम्मान में ही बढ़ोत्तरी हुई, इस विजय से कोई राजनीतिक लाभ मुगलों को नहीं प्राप्त हो सका।

इरान के साथ शाहजहाँ का सम्बन्ध

शाह अब्बास प्रथम की (1629) मृत्यु के बाद शाहजहाँ ने यद्यपि एक बार फिर इरानी प्रशासक अलीमर्दान खां को अपनी तरफ मिलाकर कंधार को अधिकृम कर लिया था तथापि काफी दिनों तक कंधार पर उसका अधिपत्य कायम न रह सका।

बल्ख में गुगलों की असफलता के बाद काबुल तथा गजनी में उजवेकों तथा अफगान कबीलों ने पुनः एक बार विद्रोह तथा षडयंत्र रचना शुरू कर दिया।

स्थिति का लाभ उठाकर इरानियों ने पुनः 1649 में कंधार को अधिकृत कर लिया। यह शाहजहाँ की प्रतिष्ठा पर एक महानतम आघात था और उसने कंधार को वापस लेने के लिए राजकूमारों के नेतृत्व में एक—एक करके तीन अभियान भेजे। लेकिन मुगलों को कभी भी सफलता नहीं मिल सकी। अंततः कंधार मुगल साम्राज्य से हमेशा—हमेशा के लिए अलग हो गया। पुनः वह मुगल साम्राज्य का अंग न बन सका।

औरंगजेब ने अपने काल में कंधार विजय के असफल प्रयासों पर रोक लगा और ईरान से पुनः राजनीतिक सम्बंध ही कायम किये। लेकिन 1666 में इरान के शासक शाह अब्बास ने मुगल राजदूत का अपमान किया और उसने औरंगजेब को भला—बुरा कहा। इसके लिए उसे दंड दिया जा सके कि इसके पहले ही उसकी मृत्यु हो गयी। उसके उत्तराधिकारी महत्वहीन साबित हुए। इसके बाद औरंगजेब ने पुनः कभी कंधार विजय का स्वप्न नहीं देखा। दूसरे सफावी तथा उजवेग शक्तियों के क्षीण पड़ जाने के कारण अब कंधार का सामरिक महत्व पहले जैसा नहीं रह गया था। इस प्रकार अगले 50 वर्षो तक भारत की सीमा पर ईरानियों का खतरा समाप्त हो गया था।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मुगलों की विदेशनीति का मुख्य आधार भारत की सुरक्षा था और साम्राज्य की उत्तरी, प0 सीमाओं को मजबूत करना था। इस सीमा को राजनीतिक तरीको से अधिक मजबूत बनाया गया। इस प्रकार सैनिक तथा राजनीतिक उपायों से मुगल भारत को विदेशी आक्रमणों से सुरक्षित रखने मे ंकाफी हद तक सफल रहे।

दूसरे मुगलों ने प्रमुख एशियायी राष्ट्रों के साथ बराबरी का सम्बंध रखा। इसके अलावा मुगलों ने अपनी विदेशनीति का उपयोग भारत के व्यापारिक हितों को बढ़ाने के लिए भी किया। भारत तथा मध्य एशिया के बीच होने वाले व्यापार के लिए काबुल तथा कंधार महत्वपूर्ण द्वार थे। इस प्रकार मुगल अपनी विदेशनीति में पूर्णतयः सफल रहे।

हुमायूं की पराजय के कारण

1. आलसी व व्यवसनी।
2. भाईयों द्वारा लगातार षड़यंत्र एवं सिंहासन प्राप्ति की लालसा। हिंदान—बंगाल आक्रमण के समय।
3. शेरशाह की शक्ति को कम करके आंकना।
4. दिल्ली दरबार व दीनपनाह के निर्माण में ज्यादा समय नष्ट करना।

5. निम्न कोटि की राजनैतिक समझ व सेनापति एवं गलत युद्ध स्थल का चुनाव– चौसा।
6. कुशल नेतृत्व और रणनीति का अभाव।
7. हुमायुं के शत्रुओं के पास में तोपखाने का होना– जैसा कि बाबर के शत्रुओं के पास न था।
8. राजपूतों की मैत्री न प्राप्त करना।
9. निम्न कोटि की आर्थिक व्यवस्था।

"हुमायूं जीवन भर लड़खड़ाता रहा और लड़खड़ाते ही उसकी मृत्यु हो गयी।"
–लेनपूल

चरित्र

1. शिक्षित सुसंस्कृत सभ्य–
2. प्रजावत्सलता व दनमाशीलता– उदारता
3. अदम्य उत्साह व साहस
4. व्यक्ति दृष्टि से सफल शासक की दृष्टि से असफल।
5. उसका चरित्र आकर्षक हे किन्तु प्रभाव शाली नहीं– लेनपूल
6. अयोग्य सेनापति कूटनीति व राजनीतक।

वेलेजली 1798–1804

(1) भारत में ब्रिटिश साम्राज्य का वास्तविक संस्थापक लार्डवेलेसली को क्यों माना जाता है ?

क. जिस समय लार्डवेलेसली (1798–1804) ने भारत में अपना पद भार संभाला वह भारत में ब्रिटिश शासन का सबसे नाजुक समय था।

ख. उस समय नेपोलियन सारे यूरोप को आक्रांत करता हुआ मिश्र तक पंहुच चुका था, जिससे अंग्रेजों के भारतीय साम्राज्य के लिए भारी खतरा उत्पन्न हो गया था।

ग. इस समय फ्रांसीसियों ने भारतीय देशी राजाओं से सांठ गांठ कर लिया था। इससे भारत में ब्रिटिश हितों को भारी खतरा उत्पन्न हो गया था।

घ. ऐसी विषम स्थिति में वेलेसली ने टीपू सुल्तान को हराया और अपने छोटे भाई की सहायता से मराठों की शक्ति का मानमर्दन किया।

ड. इसने उत्तरी तथा दक्षिण पूर्वी भारत में ब्रिटिश अधिकार को बढ़ाया तथा ब्रिटिश सरकार के हित में कई प्रदेशों को अधिकृत किया।

च. उसी ने अंतिम रूप से फ्रांस की भारतीय महत्वाकांक्षाओं को चूर–चूर कर दिया। जिससे भविष्य में कभी भी भारत में फ्रांसीसियों ने सिर उठाने का साहस न कर सकें।

"चोलवंश"

1. विजयालय – 850–871 AD पल्लवों के अधीन
2. आदित्य प्रथम– 871–907 AD
   स्वतंत्र राज्य की घोषणा–
3. परान्तक प्रथम– 907–953 AD
4. राजराज प्रथम 985–1019 AD

तंजौर अभिलेख में युद्धों का वर्णन

1. चेर राजा, भास्कर रवि वर्मा को पराजित किया।
2. पाण्डय राज्य पर आक्रमण कर नरेश अमर भुजंग को बंदी बना लिया। तत्पश्चात दोनों राज्यों को अपने में मिला लिया।
3. लंका नरेश, महेन्द्र पंचम को पराजित कर राजधानी अनुराधा पुर को नष्ट भ्रष्ट कर दिया।
4. गंगवाड़ि तथा नोलम्बवाड़ि को अधिकृत किया।
5. वेगी के चालुक्य से सम्बंध– चेगी नरेश दाना रवण था, जो तेलगु नरेश जटाजोड़ भीम द्वारा पराजित कर मार डाला गया, तत्पश्चात उसने दो पुत्र शक्तिवर्मन तथा विमला दित्य भाग कर राजराज की शरण में गये।

   राजराज, भीम को पराजित कर शक्ति वर्मन को राजा बनाया और विमला दित्य से अपनी पुत्री का विवाह कर दिया। इस प्रकार पूरा वेगी राज्य राजराज के प्रभाव में रहा।
6. इसी समय चालुक्यों की दूसरी शाखा मान्यखेद का शासक सत्याश्रय था, जो चेगी पर राजराज प्रथम के प्रभाव से चिंतित होकर आक्रमण कर दिया। लेकिन शीघ्र ही राजराज ने राजेन्द्र प्रथम के नेतृत्व में मान्यखेद पर आक्रमण करवा दिया। जिससे विवश होकर सत्याश्रय को अपने वेगी घेरे को उठाना पड़ा।
7. इसके बाद राजराज ने कलिंग तथा मालद्वीप पर अधिकार कर लिया।

उपाधि

चोलमार्तण्ड, केरलान्टक, सिंह कातंक आदि। यह शैवधर्मानुयायी था।

सांस्कृतिक उपलब्धि

1. तंजौर में राजराजेश्वर (शिवमंदिर) का निर्माण।
2. श्री विजय के शैलेन्द्र शासक, श्री मारविजयों तुंग वर्मन को नेगपरम में बौद्ध बिहार बनाने की अनुमति। जो नेगपरम में बौद्ध बिहार बनाने की अनुमति। जो चूड़ामणि बिहार के नाम से प्रसिद्ध है।
3. उसने राज्य की भूमि का सर्वेक्षण कराया, जिससे उर्वर, अनुर्वर तथा बंजर भूमि का पता लगाया गया। उसी आधार पर कर निश्चित किया गया।
4. इसका शासन सिकेन्द्री करण की नीति पर आधारित था।

राजेन्द्र प्रथम 1012–1044

1. श्रीलंका पर आक्रमण कर उसके शासक महेन्द्र पंचम को बंदी बना लिया, जहाँ जेल ही में 12 वर्ष बाद उसकी मृत्यु हो गयी।
2. पाण्डय तथा चेर राज्य का जीता।
3. पश्चिमी चालुक्य शाखा के शासक जय सिंह को पराजित किया।
4. कलिंग नरेश को पराजित किया।
5. पूर्वी भारत पर आक्रमण– बंगाल के पालव शीर शासक महीपाल को हराया– गंगाई कोंठ चोलपुरम की उपलब्धि धारण किया।
6. 1025 में श्री शैल विजय– कारण– (1) भारत चीन व्यापारिक मार्ग को सुरक्षित या (2) साम्राज्य वादी मार्ग के कारण।
7. चालुक्य युद्ध– इस समय चालुक्यों को दो शाखा राज्य कर रही थी।

प्रथम–	पूर्वीशाखा	–	राजधानी वेंगी।
द्वितीय–	पश्चिमीशाखा	–	राजधानी मान्यखेर

इस समय पश्चिमी शाखा का शासक सोमेश्वर वेगी के उत्तराधिकार युद्ध का लाभ उठाकर वेंगी पर आक्रमण कर दिया। राजेन्द्र प्रथम ने वेगी के शासक राजराज के सहायतार्थ सेना भेजा, लेकिन अभी दोनों में युद्ध चल ही रहा था कि राजेन्द्र प्रथम की मृत्यु हो गयी।

राजेन्द्र का उत्तराधिकारी, राजाधिराज प्रथम चालुक्यों को धान्य कटक के युद्ध में पराजित कर भगा दिया।

राजेन्द्र प्रथम विधाप्रेमी था। वह चोलपंडित की उपाधि धारण किया।

चोल प्रशासन

(1) राजा– पद पैतृक, सहायतार्थ, युवराज एक पदाधिकारियों की कार्यकारिणी थी जिसे उद्रन कुट्टम कहा जाता है। इनकी नियुक्ति राजा स्वंय करता था। मंदिरों में राजा रानी की मूर्ति–

पदाधिकारी– मंत्री, सामन्त, उच्चपदाधिकारी, राजा निरंकुश नहीं था। वह उच्चपदाधिकारियों के सम्मति से कार्य करता था। पदाधिकारियों को वेतन में भूमिखंड दिये जाते थे।

बौद्ध साहित्य

(1) **पिटकग्रंथ–**

क. विनय पिटक
ख. सुत्त पिटक
ग. अभिधम्म पिटक

क. विनय पिटक– इसमें भिक्षु एवं भिक्षुणियों के संघ एवं दैनिक जीवन सम्बंधी आचार–विचार विधिनिषेघ और मम–नियम इत्यादि संगृहत है।
महाबग्गा एवं चुल्लबग्गा इसके दो उपभाग है।

ख. सुत्तपिटक– सुत्र इसका शाब्दिक अर्थ धर्मोपदेश अथवा धर्माख्या होता है। सुत्तपिटक इन्हीं धर्मोपदेशों का समुच्चय है। इस पिटक के 5 निकाय है।

1. दीर्घनिकाय– इसका प्रसिद्ध सुत्त–महापरिनिव्वाल सुत्त है। इसमें महात्मा बुद्ध के जीवन के अंतिम चरण की कथा है।
2. मजिक्षम निकाय–
3. संयुक्त निकाय–
4. अंगुत्तर निकाय–
5. खुद्दक निकाय– इसके निम्न ग्रंथ है। धम्मपद, उढ़ान, इतिवृत्तक, सुत्तनिपात, विमान वत्थु, पेतवत्थु, थेरगाथा, जातक कथायें आदि।

ग. अभिधम्मापिटक– ग्रंथ अष्ट कथा वत्थु–

(2) **"पालीबौद्ध ग्रंथ"**

ये त्रिपट ग्रंथो के अंतर्गत नहीं आते–

1. मिलिन्दपन्हों 2. दीपवंश 3. महावंश 4. टीकायें

1. मिलिन्दपन्हों– यह यूनानी नरेश मिलिन्द (मिनेन्डर) और बौद्ध भिक्षु नागसेन का वार्तालाप है।
2. दीपवंश– इसमें सिहलद्वीप के इतिहास का वर्णन हैं रचना 4 अर्थात 5वीं शताब्दी में मध्य।
3. महावंश– यह सिंहल का द्वितीय इतिहास ग्रंथ है। यह दीपवंश से अधिक उत्कृष्ट है। रचना लगभग 5वीं शताब्दी। इन दोनो ग्रंथो में चन्द्रगुप्त मौर्य के विषय में अत्यधिक विवरण दिया गया है।
4. टीकायें– सुमंगल विलासनी समन्त पसादिका, महावंश टीका

(3) संस्कृत बौद्ध ग्रंथ

हीनयान तथा महायान शाखा से सम्बंधित ग्रंथ–

1. महावस्तु–(ही0)– इसमें महात्मा बुद्ध का जीवन वृत्त हैं इसकी भाषा मिश्रित संस्कृत है।
2. ललित विस्तार–(महां)– बुद्ध के ऐच्छिक जीवन का सविस्तार वर्णन किया गया है।
3. बुद्ध चरित्र एवं सौन्दरानंद– अश्व घोष

(4) अवदान बौद्ध ग्रंथ–

1. दिव्यावदान–

"कुषाण वंश"

परिचय– कुषाण वंश को प्रारम्भिक इतिहास की जानकारी हमें चीनी व बौद्ध ग्रंथो, अभिलेखों व सिक्कों से प्राप्त होती है।

कुषाण यूची जाति की एक शाखा थी, जो प्रारम्भ में चीन के सीमावर्ती प्रदेशो कानसू तथा निंगसिया निवास करते थे। लगभग169 BC में 'हुग' नामक एक अन्य पड़ोसी जाति से पराजित होकर अपने मूल स्थान को छोड़ने के लिए ये बाध्य हुआ। इसके बाद इन्हें वुसुन तथा सीर दरियां में निवास करने वाली 'शक' जाति से युद्ध करना पड़ा। अंततः ये 5 भागों में बंट गये, उन्ही में से एक शाखा कई शुआंग थी। ये बाद में कुषाण कहलाये।

इसका प्रारम्भिक शासक, कुजुल कडफिसेस था। 15 AD से 65 AD था। दूसरा शासक विमकड फिसेस था। इसी ने सर्वप्रथम स्वर्ण सिक्कों को प्रचलन करवाया था। इसका राज्य मथुरा तक विस्तृत था। विम लगभग 65 से 78 AD तक राज्य किया था।

'कनिष्क'

कनिष्क कुषाण वंश का सर्वाधिक शक्तिशाली राजा था। परन्तु साक्ष्याभाव में उसकी उत्पत्ति वंश जाति तथा प्रारम्भिक जीवन अंधकार पूर्ण है।

स्टोन कोनो के अनुसार–"कनिष्क यूवी जाति को छोटी शाखा से सम्बंधित तथा भारत में खोटान से आया थां।" इसके प्रारम्भिक इतिहास की तरह इसके राज्या रोहण की तिथी भी भारतीय इतिहास की सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रश्न रहा है।

1. फलीट तथा कनेडी– 58 AD, तथा
2. मजूमदार 248 AD तथा R.G. भन्डारकर 278 AD मानते है।
3. मार्शल स्टोनकोनों तथा स्मिथ– 125 AD मानति है।
4. फर्ग्यूसन, ओल्डेनवर्ग, थामस, बनर्जी रैप्सन चौधरी आदि 78 AD मानते है।
   यहीं संतोष जनक है।

कनिष्क की तिथि को समस्या पर विचार करने के लिए 1760 में लंदन में एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया गया था, जिसमें सर्व सम्मति से 78 AD को ही कनिष्क के राज्या रोहण की प्रथम तिथि स्वीकार किया गया है।

विजयें

(1) पूर्वी भारत की विजय– इसके बारे में कोई निश्चित साक्ष्य या युद्ध का वर्णन नहीं मिलती। मात्र अभिलेखों तथा सिक्को की प्राप्ति के आधार पर यह अनुमान लगाया गया है। कि अमुक स्थान को कनिष्क ने जीतकर अपने साम्राज्य में मिलाया होगा।

सारनाथ (U.P.) बिहार तथा पश्चिम बंगाल से इसके अभिलेख तथा सिक्के मिले है। श्री धर्म पिटक निदान सुत्र से पता चलता है कि कनिष्क ने पाटलिपुत्र के राजा पर आक्रमण कर पराजित किया था।

पाटलिपुत्र तथा भोजपुर (बक्सर) से सिक्को का ढेर मिला है।

बंगाल में– तामलुक, महास्थान से तथा उड़ीसा के मयूरभंज, शिशुपालगढ़, पुरी गंजाम आदि स्थानों से कनिष्क का सिक्का मिला है।

मात्र सिक्कों के आधार पर इसका अनुमान लगाना मुक्ति संगत न होगा। सिक्के व्यापारिक प्रसंग में भी एक स्थान से दूसरे स्थान पर आ जा सकते है।

(2) चीन के साथ युद्ध– चीनी सेनापति, पानचाऊ, नरेश–हनवंशी
युद्ध का कारण– कनिष्क द्वारा हन राजकूमारी से विवाह प्रस्ताव तथा चीनी नरेश द्वारा प्रस्ताव का ठुकराया जाना। पहले युद्ध में कनिष्क पराजित हुआ, पर शीघ्र ही अपनी पराजय का बदला ले लिया। कनिष्क ने सुसंगलिन पर्वत के पूर्व के भाग–(चीनी तुर्किस्तान) पर अधिकार कर लिया, जिसमें यारकंद, खोटान तथा काशगर शामिल था।

(3) पश्चिमोत्तर भारत की विजय– कनिष्क के शासन काल के 11वें वर्ष का दो अभिलेख एक सुईबिहार दूसरा जेद्दा (पेशावर) में मिला है। राजतरंगिणी से पता चलता है कि उसका काश्मीर पर अधिकार था।

(4) दक्षिणी भारत– सांची से कनिष्क संवत 28 का एक लेख मिला है। जिसके आधार पर निष्कर्ष निकलता है कि–"दक्षिण में कम से कम विंध्य पर्वत तक कनिष्क का साम्राज्य विस्तृत था।"

श्रेणी प्रथा

आर्थिक स्थिति– (1) रेशम मार्ग पर कब्जा– रेशम मार्ग– चीन से रोम जाता था।
(2) मध्य एशिया तथा परिचात्य विश्व के साथ घनिष्ठ व्यापारिक सम्बंध की स्थापना।

"स्त्रिया"– रोम प्रतिवर्ष भारत से विलासिता की वस्तु क्रय करने में 10 करोड़ से स्टर्स खर्च करता है।
पेरीप्लस के अनुसार– भारत से मसाले, मोती, मलमल हाथी दांत , औषधियां, चंदन इत्र का निर्यात रोम को जाता था, बदले में सोना आता था।
पर्यापत मात्रा में स्वर्ण सिक्को का निर्माण– विमकश प्रसेपा R.S. Sharma आर्थिक समृद्धि की दृष्टि से कुषाण काल को ही स्वर्ण युग मानते है।

धर्म

बौद्ध अनुभुतियों के अनुसार– कनिष्क बौद्ध धर्म स्वीकार करने के पहले अशोक की तरह अत्याचारी तथा निर्दयी थी।

मधयान शाखा को प्रथम– पेशावर में (चैत्य) स्तम्भ का निर्माण। चतुर्थ बौद्ध संगीत का आयोजन काश्मीर के कुन्डल वन में। अध्यक्ष वसुमित विभाषा शात्र का संकलन।

धर्म सहिष्णु– उसके सिक्को पर बुद्ध की मुर्तियों के अतिरिक्त–यूनानी, एलमी, मिश्री, हिन्दु देवी देवताओं की मुर्तियां भी उत्कीर्ण मिलती है।

'साहित्यिक प्रगति'

विद्या का उदार संरक्षक था।

(1) अश्व घोष– राजकवि– रचना–
   1. बुद्ध चरित
   2. सौन्य संद
   3. शारिपुत्र प्रकरण

(2) नार्गाजुन– माध्यमिक शुन्य वाद, रचना– प्रज्ञाषारमिता

(3) चरक– राजवैध– चरक संहिता
   अन्य – वसुमित्र, पार्श्व– संघरक्ष
   विभाषाशास्त्र By वसुमित्र

'कला तथा स्थापत्य'

पुरूष में टावर का निर्माण– 13 मंजिला 400 फिट ऊंचा पास में संघाराम का निर्माण–
कनिष्क पुर तथा सिरकय (तक्षशिला) नामक नगरों का निर्माण कारमी।

(1) गंधार कला–

नाम– युनान बौद्ध, इण्डोग्रीक, ग्रीको रोमन

इसी कला में सर्वप्रथम बुद्ध मुर्तियों का निर्माण

तकनीक– विषय वस्तु भारतीय– तकनीक, यूनानी। काले स्लेटी पाषाण यूने तथा पक्की मिट्टी से बनी।

इन मुर्तियों में आध्यात्मिकता तथा भावुकता का अभाव है। जबकि शारीरिक सौन्दर्य तथा बौद्धिकता की प्रधानता दिखाई गयी है। यथा मांसपेशियों, मूछों, लहरदार बालों का प्रदर्शन, वेषभूषा यूनानी, जूता पहने, प्रभा मंडल सादा तथा अलंकरण रहित, सिर पर बाल आदि। ये बुद्ध मुर्तियां अधिकांशतः ध्यान, धर्मचक्र, प्रर्वतन, वरद एवं अभय मुद्राओं में निर्मित है।

इनकी तुलना यूनानी देवता अपोलो से की गयी है।

(2) मथुरा कला– इस समय मथुरा भी कला का केन्द्र था, यहाँ अनेक स्तूपों बिहारों तथा मुर्तियों का निर्माण हुआ। दुर्भाग्य वश आज एक भी बिहार तथा स्तूप शेष नहीं है। किन्तु अनेक बौद्ध जैन तथा हिन्दु मुर्तियां मिली है।

1. बुद्ध मुर्तियां– प्रारम्भ में यह माना जाता रहा है कि मथुरा कला की बुद्ध मुर्तियों का निर्माण गंधार कला के प्रभाव एवं अनुकरण से किया गया था। परन्तु यह सत्यन ही रहा। इन बुद्ध मुर्तियों का आधार मूल रूप से भारतीय है, इस कला में भरहुत एवं सांची की प्राचीन भारतीय कला को ही आगे बढ़ाया गया है।

   मथुरा से बुद्ध एवं बोधिसत्वों की खड़ी मुद्रा में बनी हुई मुर्तियां मिली है। वे आत्मिकता एवं भावना प्रधान है। अनेक मुर्तियां वेदिका स्तम्भों पर उत्कीर्ण है।

2. हिन्दू मुर्तियां– विष्णु, शिव, कुवेर, नाग पक्ष आदि की मुर्तियां।
3. जैन मुर्तियां– दो प्रकार की है।

- *खड़ी मूर्तियां– जो काचोर सर्ग मुद्रा में है।*
- *बैठी मूर्तियां– जो पदमासन में है।*

4. अन्य मुर्तियां– मथुरा से एक सिर रहित मुर्ति मिली है। जिस पर–"महाराज राजाधिराज देवपुत्रों कनिष्कों अंकित है।"

यह घुटने तक कोट तथा जुता पहने तथा हाथ में तलवार लिये है। कला की दृष्टि से यह प्रतिमा उच्चतम कोटि की है तथा विदेशी प्रभाव से मुक्त है।

सल्तनत व मुगलकाल

(1) इल्तुतमिश की प्रारम्भिक कठिनाईयां क्या थी। उनके समाधानार्थ उसने कौन–कौन से कदम उठाये।

उसकी निम्न समस्याये थी–

1. स्वतंत्र शक्तिशाली तुर्की सामंत।
2. याल्दौज की प्रतिद्वंदिता।
3. सेना का विश्वास प्राप्त करना।
4. अनेक सरदारों दारा स्वतंत्र राज्य स्थापित करने का प्रयास।
5. राजपूत शासकों एवं नरेशों का विरोध।
6. पश्चिमोत्तर सीमा समस्या।
7. अस्त–व्यस्त प्रशासन।

समाधान

1. सरदारों तथा अमीरों का दमन।
2. बंगाल विजय।
3. याल्दौज, कुबाचा का दमन।
4. चालीस तुर्की अमीरों के दल का गठन।
5. चंगेज खां के आक्रमण का सामना।
6. खोखरों का दमन।
7. राजपूतों पर विजय तथा दोआव पर अधिकार।

अन्य

1. वंशानुगत उत्तराधिकार की स्थापना किया।
2. प्रशासनिक व सांस्कृतिक उपलब्धि– हजराते दिल्ली प्रतिभाशालि दिल्ली।
3. दिल्ली, विद्वानों, कवियों, संतो आदि की – शरणा स्थली बन गयी।
4. प्रशासन– इम्ता, सेना तथा मुद्रा प्रणाली का गठन।

(2) तुगलक साम्राज्य के पतन के क्या कारण थे ?
फिरोजशाह तुगलक कहाँ का उत्तरदायी था ?

यद्यपि उत्थान तथा पतन प्रकृति का शाबूवत नियम है तथापि किसी भी साम्राज्य का उत्थान पतन किन्ही विशिष्ट कारणों से होता है।

वास्तव में साम्राज्य का पतन मुहम्मद तुगलक के समय में ही प्रारम्भ हो गया था, किन्तु फिरोज के काल में यह असाध्य रोग के रूप में प्रगट हुआ।

1. साम्राज्य की विशालता।
2. आर्थिक संकट।
3. निरंकुश साधन।
4. मुहम्मद तुगलक की योजनाओं की असफलता।
5. मुसलमानों का नैतिक पतन।
6. हिन्दुओं को विद्रोह।
7. अयोग्य उत्तराधिकारी।
8. तैमूर का आक्रमण 1398।

फिरोज का योगदान

1. व्यक्तिगत दुर्बलतायें।
2. जागीर प्रथा।
3. धार्मिक असहिष्णुता।
4. दास प्रथा।
5. सेना की दुर्बलता।
6. उदारनीति।

रजिया की असफलता का कारण

1. सशक्त स्वार्थी एवं महत्वाकांक्षी सरदार।
2. निरंकुशता
3. नारी सुलभ दुर्बलतायें।
4. केन्द्रीय सत्ता की दुर्बलता।
5. याकूब से प्रेम करना।
6. विद्रोह एवं षडयंत्रों का युग।

(3) **अकबर को महान सम्राट क्यों कहा जाता है।**

1. प्रभावशाली व्यक्तित्व।
2. कुशल सैनिक तथा महान विजेता।
3. जन कल्याणकारी शासक।
4. धार्मिक सहिष्णु तथा उदार सम्राट।
5. जिज्ञासु सम्राट– सत्य खोजने की प्रवृत्ति।
6. कला प्रेमी।
7. तत्कालीन युग का प्रतिनिधि।
8. स्थान– "अकबर सिकन्दर महान की भांति विजयी, नेपोलियन की भांति महत्वाकांक्षी, अशोक की भांति प्रजापालक तथा धर्म सहिष्णु, शेरशाह की भांति कुशल शासक, चन्द्रगुप्त द्वितीय की भांति साहित्य तथा कला का प्रेमी एवं राजनीति में इग्लैंड की रानी एलिजाबेथ प्रथम, लुई दवे तथा स्थेन के राजा फिलिप द्वितीय के समान है।"

   इसी कारण अकबर दैदित्यमान सूर्य के समान इतिहास के क्षितिज पर शाश्वत रूप से चमकता है।

(4) **अकबर एक राष्ट्रीय सम्राट था।**

1. राजनैतिक एवं प्रशासनिक एकता– हिन्दु मुस्लिम सभा को राज्य में स्थान।
2. धर्मनिर्पेक्षता एवं जन कल्याण।
3. सामाजिक एकता।
4. सामाजिक सुधार– बाल विवाह, आदि।
5. सामाजिक समन्वय– होली, रक्षाबंधन, दिवाली, दशहरा आदि मनाता था।
6. सांस्कृतिक एकता– हिन्दी ग्रंथो का फारसी अथवा ललित कलाओं में हिन्दु मुस्लिम शैली का समन्वय।
7. धार्मिक एकता– दीनेइलाही की स्थापना।
8. आर्थिक एकता एवं सम्पन्नता।

राजपूत नीति

1. वैवाहिक सम्बंध– आमेर (भरमल), जैसलमेर, जोधपुर, बीकानेर आदि राज्यें थे। रणथम्भौर व मेवाड़ से वैवाहिक सम्बंध नहीं थे।
2. महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्ति(भगवान दास–5 हजारी, मानसिंह–7 हजारी)
3. धार्मिक स्वतंत्रता।
4. विरोधी राजपूतों पर विजय– यथा मेवाड़, रणथम्भौर, मालवा आदि।
5. उदारता की नीति।

नूरजहाँ

शासन पर नूरजहाँ के प्रभाव के कारण (प्रभाव का प्रथम युग 1611–1622 तक)

1. प्रशासन में जहांगीर की उदासीनता।
2. सम्बंधियों के ऊंचे पदों पर नियुक्तियां।
3. नूरजहाँ की गुट बंदी का प्रभाव।

प्रभाव का दूसरा युग 1622–27 तक– यह षडयंत्रो उपद्रवों का युग था।

1. खुर्रम (शाहजहाँ) से शत्रुता व शहरयार का संरक्षण।
2. महावत खां का विद्रोह– प्रशासन पर अत्यधिक प्रभाव व शयर यार को संरक्षण तथा खुसरों (जहांगीर का ज्येष्ठ पुत्र) की हत्या के कारण अमीर असंतुष्ट हो गये। जिनका नेता महावत खां था।

मुहम्मद तुगलक

चरित्र मूल्यांकन

1. वह व्यक्तिगत गुणों की दृष्टि से असाधारण था– धर्मसहिष्णु, धार्मिक, शिक्षित, सुसंस्कृत आदि।
2. वह एक सैनिक तथा सेनापति की दृष्टि से योग्य था। उसने सभी विद्रोहो का दमन भली भांति किया, बाद में चाहे पुनः विद्रोह हुए।
3. अत्यधिक परिश्रमी था।
4. काफिर होने का आरोप– BY वरनी, इसामी।
5. क्रूर व रक्त पियासू था।
6. पागल था BY एलफिसेस।
7. उसमें विरोधी गुणों का मिश्रण था।
8. निष्कर्ष– यद्यपि वह व्यक्तिगत दृष्टि से सफल रहा लेकिन शासक की दृष्टि से असफल रहा। "वह न तो अपने राज्य की सुरक्षा कर सका और न अपनी प्रजा की भलार्ड और न हीं अपनी प्रतिष्ठा की सुरक्षा।"

शाहजहाँ का काल मुगल साम्राज्य का स्वर्णा युग क्यों कहा जाता है ?

1. विशाल साम्राज्य।
2. जनहित शासन।
3. आर्थिक सम्पन्नता।
4. शांति एवं सुरक्षा।
5. न्याय प्रियता।
6. ललित कलाओं की उत्पत्ति।

(1) औरंगजेब की दक्षिणी नीति का परिणाम–

1. शासन व्यवस्था में शिथिलता– उत्तर भारत में।
2. मराठों की स्वतंत्रता एवं राष्ट्रीय युद्ध।
3. आर्थिक क्षति।
4. गौरव का विनाश।
5. दयनीय दशा।
6. जमींदारों की स्वतंत्रता।
7. उत्तरी भारत में दुर्व्यवस्था।
8. सिख्खों जाटों, सतनामियों, राजस्थान और मारवाड का उत्कर्ष।
9. मुगल साम्राज्य के पतन में सहायक।

(2) औरंगजेब के चरित्र की विशेषतायें।

1. सरल संयमी और आदर्शजीवन।
2. पारिवारिक स्नेह का अभाव था उसमें।
3. संदेही प्रकृति।
4. परिश्रमी, साहसी एवं अनुशासन प्रिय।
5. धर्मान्धता तथा कट्टरता।
6. विद्वान एवं कूटनीतिज्ञ।
7. सफल सेनानायक।

(3) औरंगजेब की असफलता के कारण

1. सत्ता का केन्द्रीकरण
2. राजव्त के आदर्श की संकीर्णता।
3. संदेही प्रवृत्तिं
4. असहिष्णुता व धर्मान्धता।
5. राजपूतों से शत्रुता।
6. विवेकहीन दक्षिणी नीति।

(4) मुगल साम्राज्य के पतन के कारण

1. साम्राज्य की विशालता।
2. अयोग्य उत्तराधिकारी।
3. सेना में दुर्व्यवस्था।
4. अमीरों की गुटबंदिया।
5. बाह्‌य आक्रमण।
6. प्रशासनिक दुर्बलता तथा जनहित का अभाव।
7. औरंगजेब की धार्मिक तथा दक्षिणी नीति।

(1) शिवाजी का मूल्यांकन कीजिए ?

1. आकर्षक व्यक्तित्व।
2. दयालु एवं स्नेही।
3. नैतिकता।
4. धर्म परायगता।
5. कुशल सेनानायक।
6. कुशल प्रशासक।
7. उच्च कोटि का राजनीतिज्ञ।
8. हिन्दु शासन व राष्ट्रनिर्माता।

(1) सम्राट अशोक को महान क्यों कहा जाता है।

सम्राट अशोक की महानता उसकी विजय साम्राज्य की विशालता सेना की अजेयता तथा भव्य राज्यवैभव से नहीं अपितु उसकी महानता उसके व्यक्तिगत चरित्र धर्मसहिष्णुता, लोकोपकारिता तथा सामाजिक एकता तथा उदारता से है। निम्न कारण–

1. अशोक का महान व्यक्तित्व।
2. विजेता।
3. धर्म विजेता।
4. उदार, धर्म सहिष्णु एवं धार्मिक सम्राट।
5. धर्म प्रचारक।
6. महान आदर्शवादी।
7. राष्ट्रीय एकता का महान उन्नायक।
8. महान कला प्रेमी एवं संरक्षक।
9. प्रजा पालक तथा प्रजा वत्सल सम्राट।
10. महान शासक।

मौर्य साम्राज्य के पतन के कारण

1. अयोग्य उत्तराधिकारी।
2. प्रशासन का अतिशय केन्द्रीकरण।
3. राष्ट्रीय चेतना का अभाव।
4. आर्थिक व सांस्कृतिक असमानता।
5. प्रांतीय शासकों के अत्याचार।
6. करो की अधिकता।
7. अशोक योगदान।

गुप्त युग– 'स्वर्ण युग'

1. राजनैतिक एकता का काल।
2. महान सम्राटों का काल।
3. श्रेष्ट शासन व्यवस्था का काल।
4. आर्थिक सवृद्धि का काल।
5. धार्मिक सहिष्णुता का काल।
6. साहित्य विज्ञान एवं कला के चरमोत्कर्ष का काल।
7. भारतीय संस्कृति के प्रचार और प्रसार का काल।

'शुंगवंश'

पुष्यमित्र शुंग– उपलब्धियां

प्रारम्भिक जीवन अज्ञात– भारतीय साहित्य में शुंगो को ब्राह्मण माना गया है। पाणिनी ने शुंग वंश को भारद्वाज गोत्र का ब्राह्मण माना है। तारानाथ ने भौवौंडों को ब्राह्मण माना है। हरिवंश ने शुंगो को द्विज माना है।

"उपलब्ध साधनों से ज्ञात होता है एक सेना का निरीक्षण करते हुए सेनापति पुत्र मित्र ने धोखे से वृहद्रथ की हत्या कर डाला।"

यह घटना लगभग 184 BC की है। बाणभट्ट के हर्ष चरित्र के अनुसार– "अनार्थ सेनापति पुष्यमित्र ने सेना दिखाने के बहाने अपने प्रजा दुर्बल स्वामी वृहद्रथ की हत्या कर दी।"

पुराणों के अनुसार– "सेनानी पुष्यमित्र वृहद्रथ की हत्या कर 36 वर्षो तक राज्य करेगा।"

"पुष्प मित्र ने मगध साम्राज्य पर अधिकार करके जहाँ एक ओर यवनों के आक्रमण से देश की रक्षा किया, वहीं दूसरी ओर देश में शांति और व्यवस्था की स्थापना कर वैदिक धर्म एवं आदर्शो की पुनः स्थापना की। इसीलिए उसका शासन वैदिक प्रतिक्रिया अथवा पुर्नजागरण का काल भी कहा जाता है।"

विदर्भ युद्ध– मालविकाग्नि मित्र से ज्ञात है कि वृहद्रथ के काल में ही विदर्श (बरार) यज्ञ सेन के नेतृत्व में स्वतंत्र हो गया था जो वृहद्रथ के सचिव का साला था। सिंहासनरूढ़ होने के बाद पुष्पमित्र ने सचिव को बंदी बना कर कारागार में डाल दिया था। पुष्पमित्र का पुत्र अग्नि मित्र विदिशा का शासक था। माधवसेन जो महासेन का चचेरा भाई था, अग्नि मित्र का परम मित्र तथा विदर्भ राज्य का दावेदार था। जिसे यज्ञसेन ने बंदी बना लिया। अग्नि मित्र ने तुरंत छोड़ देने को कहा। तो यज्ञसेन ने कहा कि सचिव अर्थात (बहदोई) को रिहा कर दिया जाय तब कुछ होकर अग्निमित्र ने आक्रमण कर दिया। यज्ञसेन पराजित हुआ तथा विदर्श को बांट कर आधा भाग माधव सेन को दिया गया। आधा यज्ञसेन को बर्धा नदी के राज्य की सीमा मानी गयी।

(2) यवन आक्रमण

विभिन्न साक्ष्यों से ज्ञात होता है कि–"विभिन्न साक्ष्यों से ज्ञात होता है कि– यवन आक्रमणकारी बिना किसी अवरोध के पाटलिपुत्र के अत्यंत निकट चले आये।"

पतंजलि जो पुष्पमित्र के पुरोहित थे के अनुसार–"यवनों ने साकेत पर आक्रमण किया यवनों ने माध्यमिका (चित्तोड़) पर आक्रमण किया।"

गार्गी के संहिता के अनुसार– "दुष्ट विकारा यवनों ने साकेत पांचाल मथुरा को जीता तथा पाटलिपुत्र तक पंहुच गया। यह यवन आक्रमणकारी नेता कौन था विवाद है। कुछ विद्वान– डेमेट्रियास्त तथा कुछ मिनेन्डर को मानते है।"
N.N. घोष – दो आक्रमण – प्रथम का नेता डिमेट्रिसस था। दूसरा को भिनैन्डर था।
टार्न– एक आक्रमण नेता– हिमेड्रियस– मिनेन्डर उसका सेनापति थां
जो भी इतना निश्चित है कि यवन परास्त हुए।
मालविकाग्नि मित्र के अनुसार– "पुष्यमित्र में वसुमित्र के नेतृत्व में या के लिए घोड़ा छोड़ा, जो यवनों द्वारा सिंधु नदी के तट पर पकड़ लिया गया। यही युद्ध का कारण था।"

इस प्रकार पुष्यमित्र अपनी विजयों के कारण उत्तरी भारत का एकछत्र सम्राट बन गया। उसके राज्य में उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिणी में बराबर तक तथा पश्चिम में पंजाब से लेकर पूर्व मगध तक विस्तृत था।

"अश्वमेघ यज्ञ"

1. अयोध्या अभिलेख में पुष्यत्रि को दो अश्वमेय यज्ञों का अनुष्ठान करने वाला कहा गया है। "द्विरश्वमेघ याजिन"।
2. हरिवंश पुराण– उसने परम्परागत आधार पर अश्वमेघ यज्ञ का अनुष्ठान किया जिसका सम्पादन चिरकाल से नहीं हुआ था।

"धार्मिक नीति"

(1) दिव्यावदान व तारानाथ– के अनुसार पु0 शुंग बौद्धो का घोर शत्रु था तथा स्पूतों व बिहारों का विनाशक था।

दिव्यावदान– "उसने निश्चय किया कि यदि अशोक ने 84000 स्तूजों का निर्माण करवाकर प्रसिद्धि प्राप्त की थी तो मै उसका विनाश कर प्रसिद्धि प्राप्त करूंगा। एक बार वह पाटलिपुत्र के कुक्कुटा राम के बिहार को नष्ट करने गया था लेकिन एक गर्जना सुनकर वापिस चला आया।"

शाकल में उसने घोषण किया था जो मुझे एक बौद्ध सिर देगा उसे में 100 दिनार दूंगा।

उपर्युक्त सभी विवरण बौद्ध ग्रंथो में ही मिलते है, जो सत्य नहीं ज्ञात पड़ते। शुंगो के समय की सांची तथा भरहुत की कलाकृतियों के आधार पुष्यमित्र के बौद्ध द्रोही होने का मत स्पष्टतः खंडित हो जाता है। भरहुत की एक वेष्टिनी पर 'सुगनंरजे' शुंगो के राज्य काल में ये अंकित है। इससे शुंगो की धार्मिक सहिष्णुता का परिचय मिलता है।

सम्भव ही कुछ बौद्ध भिक्षु, बौद्ध राजा वृहद्रथ की हत्या से क्षुब्ध होकर यवन राजा से जा मिले हो और उन्हीं की हत्या के लिए पुष्यमित्र 100 दिनार देने की घोषणा किया हो। यह देश को एकता व अखंडता के लिए आपरेशन ब्लूस्तर को तरह एक आपरेशन था।

स्वंय दिव्यावदान का कथन है कि—"पुष्यमित्र ने बौद्धो को अपना मंत्री नियुक्त किया था।"

"शुंग कालीन संस्कृति"

(1) **सामाजिक जीवन—** वर्णाश्रम व्यवस्था की पुनः स्थापना जो मोर्य के समय मृत प्राप्त हो गयी थी।

अनुस्मृति— जो इसी काल की रचना ही के अनुसार—"एवं धर्म निम्न होने पर भी श्रेष्ठ पर धर्म की अपेक्षा उत्तम है। यदि निम्न जाति का व्यक्ति, लोभवश, उच्चजाति वे पैशे को अपनायें तो राजा को चाहिए कि उसके सम्पत्ति जब्त करलें या उसे देश के बाहर निकाल दें। इस प्रकार मनु ने स्वधर्म पर विशेष बल दिया था।"

चारों वर्णो का कर्त्तव्य — विपत्ति के समय अन्य पेशे की छूट।
जाति प्रथा की जटिलता — अनेक जातियों का उदभव।

शुद्रों को कठोर दण्ड व ब्राह्मणों को हत्या के लिए भी साधारण दण्ड।

चार आश्रमों की व्यवस्था —
विवाह आठ प्रकार — ब्रह्म, दैव, आर्ख, प्रजा पत्य, असुर गान्धर्व, राक्षस, पैशाचा। अंतर्वणा विवाह प्रचलित थे।

अनुलोम विवाह (ब्राह्मण प्रचलित शुद्र कन्या से)— प्रतिलोम विवाह (शुद्र पुरूष उच्च वर्ण की कन्या) नहीं प्रचलित थी।

तलाक प्रथा नहीं थी — नियोग तथा विवाह प्रचलित थे।
मल नार्पस्तु प्रसन्नते, रमन्ते तत्र देवतः — **मनुस्मृति**
बाल विवाह का प्रचलन

"स्त्री को अपने पति की देवता के समान पूजा करनी चाहिए भले ही उसका पति दुरचरित या लम्बट ही क्यों न हो" — **मनुस्मृति**

(2) धार्मिक जीवन

1. ब्राह्मण धर्म राजधर्म, वैदिक यज्ञों का प्रचलन, पशुबलि प्रथा का प्रारम्भ, जोवोजीवस्यमोजनम, वैदिकी हिंसा हिसान भषति, का सिद्धान्त का प्रतिपादन इसी समय हुआ। भागवत तथा पशुपत धर्मो का प्रचलन।

कला व स्थापत्य

मौर्य कला एक दरबारी कला थी, जिसका प्रधान विषय धर्म था। परन्तु शुंगकला का प्रधान विषय आध्यात्मिक व नैतिक न होकर पूर्णतः लौकिक मानव जीवन से सम्बंधित है। शुंगकला मौर्य कला की अपेक्षा एक बड़े वर्ग के मनुष्यों के मस्तिष्क, परम्परा, संस्कृत एवं विचारधारा को प्रतिबिम्बित करने में अधिक समर्थ है।

शुंगकला के उत्कृष्ट नमूने, भरहुत सांची, बोधगया व वेसनगर से मिलते है।

मौर्य कला राजकीय कला के रूप में विख्यात है तो शुंग कला लोक कला के रूप में विख्यात है।

(1) भरहुत–

यहाँ से 1873 में निर्धन को पाषाण तथा इंटो से निर्मित एक स्तूप खंड मिला था, जिसके चारों ओर पाषाण निर्मित वैदिका बनी थी।

वेदिका स्तम्भ तथा तोरण पट्टो पर उत्कीर्ण मूर्तियां एवं चित्र बुद्ध के जीवन की घटनाओं, जातक कथाओं तथा अनेक मनोरंजक दृष्यों का प्रतिनिधित्व करते है। इन पर यज्ञ, नाग, लक्ष्मी, राजा भृत्य, सैनिक, वृक्ष आदि अलंकारिक प्रतीक भी उत्कीर्ण है।

भरहुत के तोरणद्वारों की वडेरियों पर भी चित्र अंकित है। पक्षी, मगरमच्छ, कोशलनरेश सेनापति तथा मगध परेश अजात शत्रु को भगवान बुद्ध की वंदना करते हुए दिखाया गया है। इस पर बुद्ध की मूर्ति नहीं मिलती बल्कि उनके प्रतीक चिन्ह यथा स्तूप धम्म चक्र, बोधि वृक्ष, चरण पादुका, स्तन आदि।

(2) सांची– (भोपाल)

यहाँ से तीन स्तूप एक बड़ा तथा दो छोटे पाये गये है।
प्रथम महास्तूप में भगवान बुद्ध के द्वितीय स्तूप में अशोक कालीन धर्म प्रचारकों तथा तृतीय में बुद्ध के प्रमुख शिष्यों के अवशेष सुरक्षित हो।

महास्तूप का निर्माण अशोक ने इंटो से करवाया था लेकिन शुंग काल में इसे पत्थरों से जड़ दिया गया। इसके अलावा चारों दिशाओं में वेदिकायें तोरण लगा दिये गये। ये तोरण द्वारा अत्यंत सुंदर है वे अपना कला के क्षेत्र में कोई सानी नहीं रखते है। इन पर बुद्ध की जीवन घटनाओं तथा जातक कथाओं के चित्र अंकित है। यथा सिंह, हाथी, चर्मवक्र, यक्ष तथा त्रिरत्न आदि। शाल मंजिका, वृक्ष पूजा, चक्रपूजा, मृग पीपल वृक्ष आदि भी अंकित है।
सांची के अन्य दो स्तूप भी इसी तरह है।

(3) बोधि गया–

बोधिगया के विशाल मंदिर के चारों ओर एक छोटी पाषाण वेष्टिनी मिली हैं इसका निर्माण शुंग काल में हुआ था। इस पर उत्कीर्ण चित्रों में कमल, राजा, रानी, पुरूष, पशु, बोधिवृक्ष, छत्र, त्रिरत्न, कल्प वृक्ष आदि प्रमुख है।

'सातवाहन वंश'

पुराणों में इस वंश के संस्थापक का नाम सिन्धुगया सिसुक मिलता है जिसने कण्चवंश के राजा सुशमी को मारकर तथा शुंगो की अवशिष्ट शक्ति का अंतकर पृथ्वी पर अपना शासन स्थापित किया था।

पुराणों में सिसुक को आंध्र भृत्य तथा आंध्र जातीय कहा गया है। जबकि अभिलेखों में इस वंश के संस्थापकों तथा अन्य राजाओं को सातवाहन वस्तुतः ब्राह्मण थे। गौतमी पुत्र शातकर्णि की नासिक प्रशस्ति में गौतमी पुत्र को एक ब्रहमन कहा गया है।

इनका मूल स्थान महाराष्ट्र का प्रतिष्ठान या पठान था। जहाँ से अनेको अभिलेख तथा सिक्के मिले है।

(2) **सिसुक–** 60 BC से 37 BC तक
यह संस्थापक था, इसके बाद कन्ह राजा बना। यह 18 वर्षो तक राजा रहा।

(3) **श्री शातकर्णी प्रथम–** इसने अंगीय कुल के महारठी की राजकूमारी नागनिका से विवाह कर अपना सम्राज्य विस्तार तथा प्रभाव बढ़ाया था।

शातकर्णी प्रथम ने पश्चिमी मालवा, अनूप तथा विदर्भ की विजय को। इसको खारवेल से भी युद्ध करना पड़ा। हाथी मुम्फा अभिलेख के अनुसार–"अपने राज्य रोहण के दूसरे वर्ष खारवेल ने शातकर्णि की परवाह न करते हुए पश्चिम की ओर अपनी सेना भेजी।"

लेकिन खारवेल शातकर्णी को पराजित नहीं कर सका था। यह उसका एक धावा मात्र था।

शातकर्णी– दक्षिणा पक्षुपति तथा अप्रतिहत चक्र जैसी उपाधि व दो अश्वमेघयज्ञ व राजसूप यज्ञ किया।

गौतमी पुत्र शातकर्णि

गौतमी पुत्र प्रथम से लेकर गौतमी पुत्र शातकर्णि के उदय के पूर्व तक का लगभग एक शताब्दी का काल सातवाहनों के ह्रास का काल है। लगता है कि इस समय ये शकों की अधीनता स्वीकार कर लिया था। यद्यपि इस अंतराल में आपीलक, कुल्तल शातकर्णि, हाल इत्यादि राजा हुए लेकिन इसकी किसी उपलब्धि के बारे में कोई साक्ष्य नहीं मिलता है।

शीघ्र ही सातवाहनों ने अपनी खोई हुई शक्ति को शातकर्णि के नेतृत्व में पुनः अर्जित कर लिया। पुराणों के अनुसार शातकर्णि सातवाहन वंश का 23वां राजा थां यह सातवाहन वंश का महानतम शासक था। उसकी उपलब्धियों का विवरण हमे नासिक तथा कार्ले अभिलेखों तथा सिक्कों जो उसी के काल के हैरने प्राप्त होता है।

"सैनिक सफलतायें"

क्षहरात संघर्ष– क्षहरातों के आक्रमणों के फलस्वरूप सातवाहनों का अधिकार महाराष्ट्र पर से समाप्त हो गया था, जिसकी प्राप्ति के लिए शातकर्णि ने अपने राज्यरोहण के बाद 16 वर्षो तक पर्याप्त सैनिक तैयारियां की।

17वें वर्ष एक बड़ी सेना के साथ क्षहरातों के राज्य पर आक्रमण कर दिया और क्षहरात नरेश नहयान तथा उष्ज्ञवदात को पराजित कर मार डाला।

इस विजय के बाद उसने नासिक के बौद्ध संघ को 'अजकाल किय' नामक क्षेत्र दान में दिया था।

नासिक प्रशस्ति में उसने अपने को वेणाकटक स्वामी कहा है। इससे सूचित होता है कि उसने वेणाकटक अर्थात बैन गंगा का तटवर्ती प्रदेश क्षत्रयों से जीता था।

इसके बाद उसने कार्ले के बौद्ध संघ को 'करजक' नामक ग्राम दान में दिया था।

यह 'करजक' नामक ग्राम उषवदात के अधिकार में पहले था। जोगलयम्बी मुद्राभाण्ड से लगभग 13280 मुद्रायें मिली है। जिनमें दो तिहाई से भी अधिक मध्पान की मुद्रायें शातकर्णि द्वारा पुनरांकित करवायी गयी है।

"उषवदात नहयान का दामाद था"

इस शातकर्णि ने क्षहरात वंश का विनाश किया। पश्चिमी दकन में निवास करने वाली शक, यवन तथा पहलव जातियां या तो मौत के घाट उतार दी गयी अथवा देश के बाहर खदेड़ दी गयी।

अन्य विजये– उसके पुत्र पुलुमावी के नासिक गुहालेख में गौतमी पुत्र शातकर्णि द्वारा विजित निम्न प्रदेशों के नाम मिलते है

"ऋषिक, अस्मक, मूलक, सुराष्ट्र, कुकुर, अपरान्त, अनुप, विदर्भ, आकर, अवन्ति।"

नासिक प्रशस्ति से पता चलता है कि–"शातकर्णि का विन्ध्य पर्वत के दक्षिण के सम्पूर्ण प्रदेश पर अधिकार था। उसे विन्ध्य, ऋक्षवत, पटियाल, संध्य, मलय, महेन्द्र आदि पर्वतों का स्वामी कहा गया है।"

इसी प्रशस्ति में आगे कहा गया है कि उसके वाहनों ने तीनों समुद्रों का जल पिया। यहाँ तीनों समुद्रों से तात्पर्य बंगाल की खादी, अरबसागर, हिन्द महासागर से ही वैसे यह अलंकारिक अतिश्योक्ति है।

नासिक प्रशस्ति में उसकी प्रशंसा निम्न शब्दों में की गयी है–"जिसने अनेक युद्धो को जीता था। जिसकी विजयों ने पताका, अपराजित थी। जिसकी राजधानी शत्रुओं द्वारा अनाक्रमणीय थी। जो शक्ति में रामकेशव, अर्जुन तथा भीमसेन के तुल्य था तथा जो नहुष जनमेजय सगर ख्याति, राम अम्बरीश के समान तेजस्वी था।"

शातकर्णी उच्च कोटि के विजेता के साथ–साथ सफल शासन प्रबंधक व प्रजा वात्सल सम्राट था। वह अपनी प्रजा के सुख में सुखी एवं दुख में दुखी रहने वाला सम्राट था। उसने अपने साम्राज्य को अंधरों में विभाजित किया था। अपने राज्य काल के अंत उसने अपनी माता के साथ मिलकर शासन किया था।

शातकर्णि ब्राह्मण धर्मानुयायी था। नासिक प्रशस्ति में उसे वेदों का आश्रय 'आगमन निलय' कहा गया है। फिर भी वह एक धर्म सहिष्णु सम्राट था। वह बौद्धो के प्रति उदार था तथा उसने भिक्षुओं के लिए ग्राम तथा भूमि दान दिया था।

उसका शासन काल 106AD से 130 AD तक माना जात है।

(4) वशिष्ठी पुत्र पुलुमावी

यह शातकण्रि का पुत्र था। इसकी उपाधि– दक्षिणा पथेश्वर, उसके सिक्के पर– "दो पतवारों वाले जहाज" का उल्लेख है। इसी के काल मे ंअमरावती के स्तूप का सम्बर्द्धन हुआ था।

उसी के काल में शकों की कार्दमश शाखा से सातवाहनों का संघर्ष हुआ। रूद्रदामन जूनागढ़ लेखानुसार में दक्षिणा पथ के स्वामी शातकर्णि को दो बार पराजित किया तथा निकट सम्बंधी होने के कारण छोड़ देने का दावा करता है।

(5) यज्ञ भी शातकर्णी– अंतिम शक्तिशाली राजा

अंतिम राजा– पुलोमा था।

प्रशासन

1. राजा– सर्वेसर्वा, राजतंत्रात्मक, दैवो उत्पत्ति पर विश्वास, औरतों का प्रशासन में काम– यथा नागासिका, गौतमीवलभी।

2. प्रान्त को आहार– आहार के निगम में गांव होते थे आहार का शासक अमात्य होता था।

नगर का शासन– निगम सभा द्वारा चलाया जाता था। सातवाहन राजाओं ने ब्राह्मणों तथा श्रमणों की भूमि दान में देने की प्रथा आरम्भ की। कालान्तर में इसी प्रकार के दानों एवं सामंतवाद का विकास हुआ।

सामाजिक दशा

समाज– वर्णाश्रम धर्म पर आधारित था। ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य, शुद्र कार्य परम्परागत।
प्रमुख विशेषता– शकों तथा यवनो ंका भारतीयकरण। अंर्तजातीय विवाह– स्त्रियों की दशा उच्च थी। शासन कार्य करती थी। सातवाहन राजाओं के नाम– मातृप्रधान थे, जो स्त्रियों के सम्मान जनक स्थिति का द्योतक है। पर्दाप्रथा नहीं थी।

धार्मिक दशा

वैदिक तथा बौद्ध धर्म की उन्नति काल। यज्ञों का प्रचलन सातवाहन काल में दकन की सभी गुफायें बौद्ध धर्म से ही सम्बंधित है।

आर्थिक दशा

कर उपज का छठां भाग, कृषि की उन्नति दशा– व्यापार तथा वाणिज्य।
श्रेणी व्यवस्था – श्रेणी के कार्यालय को निगम सभा कहते थे।
श्रेणी धर्म – श्रेणियों के व्यापारिक नियम को श्रेणी धर्म कहते है।
कार्षानण – तांबे का सिक्का था।
बाह्य तथा आंतरिक व्यापार उन्नत पर था। सेम मिश्र चीन तक पूर्वी द्वीप समूहों से व्यापार होता था। दो पतवार वाले जहाज का उल्लेख मिलता है। बंदरगाह– सोपारा, भड़ौच आदि

साहित्य

हाल – गाथा सप्तशती
गुणाज्य व शव वर्मन – ये हाल के दरबारी कवि थे।
गुणाज्य ने वृहत्कथा तथा शव वर्मन ने कास्त्र की रचना की।

"कला एवं स्थापत्य"

सामवानि सम्राटों की धार्मिक सहिष्णुता की नीति के कारण दक्षिण भारत में बौद्ध कला को काफी प्रोत्साहन मिला। इसके गुफाओं को काटकर अनेकों चैत्यों तथा बिहारों तथा स्तूपों का निर्माण किया गया।

स्तूपों में अमरावती का सर्वाधिक प्रसिद्ध था। इसका पता 1797 ई0 में कर्नल मैकेन्जी ने लगाया था।

इनका निर्माण लगभग 200 ठ६ में किया गया। परन्तु वशिष्ठी पुत्र पुलुमावी के समय में इसका जीणोद्धार तथा कला कृतियों से सजाया गया था। इसी समय इसके चारों तरफ पाषाण वेदिका का निर्माण भी किया गया था। इस वेदिका तथा पाषाण स्तम्भों पर धर्मचक्र, बोधिवृक्ष, चरण पादुका, स्तूप आदि के अंकन है। यहाँ बुद्ध का अंकन प्रतीकों तथा मुर्तियों दोनों रूपों में किया गया है।

बिहारों तथा चैत्य गृहों में नासिक कार्ले, भाजा, कन्हेरी आदि मुख्य है।

कार्ले का चैत्य गृह सबसे लम्बा तथा सबसे सुरक्षित दशा में है। यह 24 फुट लम्बा, 25 फुट चौड़ा, 95 फुट उंचा है। इसके प्रवेश द्वार पर एक विशाल स्तम्भ बना हुआ है तथा स्तम्भ के उपर चार सिंह विराजमान है।

पल्लव युगीन कला

दक्षिण भारत की गौरवशाली कला– पल्लव नरेशों ने गुहा मंदिर (मंडप) एवं एकाश्मक मंदिर का निर्माण करवाया। पल्लव कला के विकास की शैलियों को निम्न भागों में बांटा गया है।

(1) महेन्द्र शैली – 610–640 ।

इस शैली के तहत कठोर पाषाणों को काटकर गुहा मंदिरों का निर्माण्या कराया गया, जिन्हें मंडप कहा जाता है। मुख्य मंडप निम्न है– पल्लवरम का पंच पाण्ड व मंडप– महेन्द्र विष्णु गृह मंडप, त्रिचनापल्ली का ललितांकुर, पल्लवेश्पर गृह मंडप आदि।

(2) मामल्ल शैली – 640–679 ।

इसका विकास नर सिंह वर्मन प्रथम महामल्ल के काल में हुआ। इसके तहत दो स्मारक बने।

1. मंडप 2. एकाश्मक मंदिर या – रथ अथवा सप्तबैगोड़ा भी रथों को कहा जाता है।

1. मंडप– मुख्य मंडप 10 बनाये गये– आदि बाराह मंडप, महिष मर्दिनी मंडप, पंचपांडव मंडप, रामानुज मंडप आदि।

2. रथ– द्रौपदी रथ– नकुल सह देव रथ, अर्जुन रथ, धर्म राज रथ, भीम रथ, गणेश रथ आदि।

इन रथों पर दुर्गा शिवि, गंगा पार्वती, हरिहर, ब्रह्मा, स्कन्द आदि की मुर्तियां उतकीर्ण मिलती है।

(3) राजसिंह शैली– 674–800 AD

नरसिंह वर्मन द्वितीय, राजसिंह के काल में– इस शैली के तहत गुहा मंदिरों के स्थान पर पाषाण ईंट आदि की सहायता से इमारतें, मंदिरों का निर्माण करवाया गया। जिनमें मुख्य निम्न है–

1. शोर मंदिर– पईश्वर मंदिर तथा मुकुन्द मंदिर, महाबली पुरन में।
2. कैलाश मंदिर– कांची– अति उत्तम
3. नंदिवर्मन शैली – 800–900

इसके तहत अपेक्षाकृत छोटे मंदिरों का निर्माण हुआ।